# भारत में राष्ट्रवाद के परिप्रेक्ष्य में नव्य आर्थिक व्यूह रचना के प्रसांगिक तत्व : एक पार्श्व–दृष्टि

**Dr. Sharad Dixit,**
Assistant Professor
Deptt. of Economics
R.L.B.College,
KANPUR

## शोध–पत्र सारांश

राष्ट्रवाद एक भावना भी है और विचारधारा भी। इसकी विस्तृत व्याख्या राष्ट्र की परिभाषा पर आधारित है। राष्ट्रवाद का एक अंगीभूत प्रत्यय आर्थिक राष्ट्रवाद है। वणिकवाद से लेकर वर्तमान वैश्वीकरण के युग तक यह निरन्तर पोषित होता रहा है। लेकिन पश्चिमी विकसित राष्ट्रों के आर्थिक दर्शन, आर्थिक मॉडल और आर्थिक साम्रराज्यवादी अर्थनीतियों ने भारत जैसे विकासशील राष्ट्रों की राष्ट्रवाद की संचेतना को प्रस्फुटित ही नहीं होने दिया है। आज भी हम 'फंड–बैंक स्कीम' से बंधे हैं। फलतः राष्ट्रवाद और विशेषतः आर्थिक राष्ट्रवाद को संचरित करने वाली नकारात्मक शक्तियाँ भारत पर हावी हो गयी हैं। इनमें व्यक्तिवाद और मुद्रा और पूँजी संचयोन्मुखी न्यस्त स्वार्थवाद प्रमुख हैं। इन नकारात्मक शक्तियों पर प्रभावी नियंत्रण करना आज की राष्ट्रीय आवश्यकता है। इस हेतु हमें गाँधी मॉडल पर आधारित जमींनी आर्थिक नीतियाँ और प्रक्रम अपनाने होंगे, अपना स्वयं का आर्थिक मॉडल बनाना होगा, अपनी सोच और वास्तविकता पर आधारित आर्थिक नीति क्रियान्वित करनी होगी जिसमें राजनैतिक नेतृत्व के बजाय सामाजिक–शैक्षणिक तथा स्वैच्छिक संस्थाओं की विशेष भूमिका होगी। तभी हमारा राष्ट्रवाद और आर्थिक राष्ट्रवाद सम्पोषित हो सकेगा। इस सम्पोषण में अधिकारों एवं कर्तव्यों के संतुलन का धुरीय महत्व होगा।

"आज आप जो कुछ भी हैं यह जहाँ कहीं भी हैं, उसकी वजह वे फैसले हैं जो आपने कल दिए थे।"

–एलेनॉर रूजवेल्ट

## पूर्वपीठिका

राष्ट्रवाद एक भावना भी है और विचारधारा भी है। एक भावना के रूप में राष्ट्रवाद अपने राष्ट्र के प्रति लगाव व्यंजित करता है। इसी भावना के कारण प्रायः व्यक्ति अन्य सभी प्रकार के हितों की तुलना में राष्ट्रहित को सर्वोच्च स्थान देता है।

एक विचारधारा के रूप में राष्ट्रवाद यह अपेक्षा करता है कि राज्य या राजनीतिक संगठन राष्ट्रत्व की सुदृढ़ नींव पर खड़ा हो। जो लोग

अपने आप को एक स्वाभाविक समुदाय के रूप में पहचानते हैं और एक राष्ट्र के नागरिक होने का दावा करते हैं, उन्हें अपनी पसंद की राजनीतिक प्रणाली में रहने का अधिकार है और विश्व–व्यवस्था के अन्तर्गत उन्हें अन्य राष्ट्रों के बराबर का दर्जा मिलना चाहिए। उल्लेखनीय है कि किसी राष्ट्र को किसी अन्य राष्ट्र के प्रभुत्व या आधिपत्य में रहने के लिये विवश नहीं होना चाहिए। तभी सार्थक और प्रयोज्य राष्ट्रवाद स्थापित होता है।

यहाँ यह दृष्टव्य है कि राष्ट्रवाद को चाहे एक भावना के रूप में देखा जाये या विचारधारा के रूप में इसकी विस्तृत व्याख्या राष्ट्र की परिभाषा पर निर्भर है। वस्तुतः राष्ट्र उन लोगों के समूह को कहते हैं जो स्थायी रूप से एक निर्दिष्ट भूभाग में रहते हैं और सामान्य राजनीतिक आकांक्षाओं, सामान्य हितों, सामान्य इतिहास और सामान्य नियति की चेतना के आलोक में एकता के सूत्र में बंधे हुए अनुभव करते हैं। हालांकि उनका सम्बन्ध भिन्न–भिन्न धर्म, जाति, विचारधारा और सम्प्रदाय से हो सकता है।

अब प्रश्न यह है कि राष्ट्रवाद का उदय कब और कैसे हुआ? वस्तुतः एक विचारधारा के रूप में राष्ट्रवाद का उदय यूरोप में 18वीं शताब्दी के अन्त में हुआ और यह प्रस्फुटित हुआ कि प्रत्येक राष्ट्र को अपना शासन स्वयं चलाने का अधिकार होना चाहिए। विशुद्ध रूप में राष्ट्रवाद की सहज एवं स्वाभाविक अभिव्यक्ति सर्वप्रथम फ्रेंच क्रान्ति (1789) के रूप में सामने आयी। एक सिद्धान्त के रूप में राष्ट्रवाद का सर्वोत्तम निरूपण जर्मन दार्शनिक जी0डब्ल्यू0एफ0 हीगल (1770–1831) ने किया था।

यहाँ यह कहना युक्तियुक्त होगा कि राज्य एवं राष्ट्र पर्यायवाची नहीं हैं। राज्य की तुलना में राष्ट्र का अर्थ व्यापक है। इसके विस्तृत परिप्रेक्ष्य, आयाम एवं निहितार्थ हैं। राष्ट्रवाद विशेष रूप से समाहित है और इसके अनुकूल प्रत्येक राष्ट्र अपनी आर्थिक प्रणाली का रूपायन करता है, प्रारूप रेखांकित करता है, अर्थव्यवस्था का कार्य–निष्पादन निर्धारित करता है तथा अर्थनीति क्रियान्वित करता है। इन्हीं परिप्रेक्ष्यों में यह शोध–पत्र प्रस्तुत है।

## आर्थिक राष्ट्रवाद – राष्ट्रवाद का एक अंगीभूत प्रत्यय

यदि हम आर्थिक विचारों के इतिहास का पूर्वालोकन करें तो वणिकवाद का वह दर्शन हमें स्मरित होता है जिसमें ''अनुकूल एवं स्थायी व्यापार शेष'' के माध्यम से आर्थिक राष्ट्रवाद की वणिकवादी विचारकों ने परिकल्पना की थी। ''स्वर्ण दौड़ सिद्धान्त'' इसी दर्शन की उपज था, जिसमें संरक्षित अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को राष्ट्रवाद एवं आर्थिक राष्ट्रवाद का सबल माध्यम समझा गया। ईस्ट इंडिया कम्पनी का आर्थिक साम्राज्यवाद इसी दर्शन की देन था। मुक्त व्यापार की प्रतिष्ठित अवधारणा, जो कि बाद में वर्णिकवाद के विरूद्ध विकसित हुई और संरक्षण विरोधी थी, भी राष्ट्रवाद से ही प्रेरित थी। ध्यातव्य है कि कालान्तर में ''प्रवाह सिद्धान्त'' के जनक दादा भाई नौरोजी ने मुक्त व्यापार की तुलना एक ऐसे घोड़े से की थी, जिसकी पूंछ में मानव बंधा घिसट रहा है। यहाँ घोड़ा विकसित राष्ट्र या इंग्लैण्ड का प्रतीक है तथा मानव भारत जैसे विकासशील राष्ट्र का प्रतीक है। रिकार्डो का तुलनात्मक लागत सिद्धान्त आर्थिक राष्ट्रवाद को पोषित करता हुआ, मुक्त व्यापार को प्रतिस्थापित करता हुआ ऐसा ही सिद्धान्त है जिसमें इंग्लैण्ड और पुर्तगाल, दो देशों के मॉडल में इंग्लैण्ड के निरपेक्ष रूप से दो वस्तुओं के उत्पादन में पुर्तगाल की तुलना में अकुशल होते हुये भी व्यापार से लाभ प्राप्त करते हुए दिखलाया गया है। कालान्तर में गुन्नार मिर्डल ने अपने ग्रन्थ ''एन इन्टरनेशनल इकानॉमी'' में इसी सिद्धान्त

को असंतुलनकारी एवं अन्तर्राष्ट्रीय असमानता को बढ़ाने वाला बतलाया। यही नहीं, जितने आर्थिक सिद्धान्त आज तक निर्मित किये गये हैं सबके सब पश्चिमीकृत, पूँजीवाद को पोषित करने वाले और पश्चिमी विकसित राष्ट्रों के निहित स्वार्थों को पूरित करने वाले हैं। इस दृष्टि से पुनः गुन्नार मिर्डल के ''इकानॉमिक थ्योरी एण्ड अण्डर डेवलप्ड रीजन्स'' ग्रन्थ का उल्लेख करना उचित होगा जिसमें प्रतिष्ठित आर्थिक सिद्धान्तों की विसंगतियों की ओर दृष्टिपात करते हुए मिर्डल ने ''संचयी वृत्तीय कारणात्मक सिद्धान्त'' का प्रतिपादन किया। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि अर्द्धविकसित देशों या राष्ट्रों का अपनी वास्तविकताओं पर आधारित अपना आर्थिक सिद्धान्त होना चाहिए। इन सब संदर्भों के क्रम में जर्मन अर्थशास्त्री फेडरिक लिस्ट के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। मेडरिक लिस्ट राष्ट्रवादी होने के नाते प्रतिष्ठित अर्थशास्त्र के कट्टर विरोधी थे। वे उन सभी शक्तियों के विरोधी थे जो एक शक्तिशाली आर्थिक राज्य के निर्माण में बाधक थी। लिस्ट ने इस महान सत्य का उद्घाटन किया कि एडम स्मिथ के मुक्त व्यापार तथा विश्व मित्रत्व के सिद्धान्त कभी परिस्थितियों में तथा सभी देशों के लिए हितकर सिद्ध नहीं हो सकते क्योंकि इनका सम्बन्ध एक विशेष देश में विद्यमान विशेष परिस्थिति से था। लिस्ट के मतानुसार राष्ट्रीय विकास के लिए राष्ट्रीय योजना के अनुसार राष्ट्रीय नीतियों को बनाना आवश्यक है। लिस्ट का कहना था कि यद्यपि संसार राष्ट्रों का संघ आवश्यक है परन्तु इस संघ के हितों के अनुरूपता का अभाव होने के कारण कोई एक आर्थिक नीति सभी देशों के लिए हितकर सिद्ध नहीं हो सकती। ऐसा न कहना वास्तविकता से दूर रहकर काल्पनिक संसार में रहने के समान है। लिस्ट ने अपने ग्रन्थ से दूर रहकर काल्पनिक संसार में रहने के समान है। लिस्ट ने अपने ग्रन्थ 'NATIONAL SYSTEM OF POLYTICAL ECONOMY' में राष्ट्रीय हितों की सुरक्षा के लिए संरक्षणवादी नीति का समर्थन किया है। लिस्ट इस सत्य से भली प्रकार परिचित थे कि मुक्त व्यापार नीति की जो नीति इंग्लैण्ड के लिए आर्थिक समृद्धि का स्रोत थी, वहीं यह नीति जर्मनी के आर्थिक तथा औद्योगिक विकास के लिए अभिशाप सिद्ध हो रही थी। इसी आधार पर उन्होंने संरक्षणवादी ''शिशु उद्योग कर्त'' प्रतिपादित किया था। इस दृष्टि से उन्होंने अर्थशास्त्र की अलग ही परिभाषा कर डाली कि ''राजनीतिक अर्थशास्त्र को वह विज्ञान कहा जायेगा जिसका उद्देश्य यह शिक्षा प्रदान करना है कि संसार की वर्तमान अवस्था तथा अपने निजी राष्ट्रीय सम्बन्धों को ध्यान में रखते हुए कोई राष्ट्र अपनी आर्थिक स्थिति को किस प्रकार सुधार सकता है।''

यद्यपि संरक्षणवाद का सदैव व्यापक समर्थन नहीं हुआ और पश्चिमी विकसित राष्ट्र जो कि मुक्त व्यापार के समर्थक हैं तथा विकासशील राष्ट्र जो कि संरक्षणवाद के पोषक हैं, आज भी दो खेतों में बँटे हैं। परन्तु चूँकि अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक दोनों ही पश्चिमी विकसित राष्ट्रों के प्रभुत्व में हैं अतः 1990 के दशक में वैश्वीकरण, निजीकरण और उदारीकरण जैसी अर्थनीतियों का उदय हुआ और ''फंड बैंक स्कीम'' मॉडल के अन्तर्गत भारतीय अर्थव्यवस्था के खुली हुई अवस्था होने के कारण तथा आयोजनबद्ध विकास का मार्ग अपनाये जाने के कारण, इन्हें स्वीकार करना ही पड़ा है। पुनः पश्चिमी विकसित राष्ट्रों का आर्थिक साम्रराज्यवाद भारत जैसे विकासशील राष्ट्रों पर हावी है जिससे हमें देस–सबेर मुक्ति पानी ही होगी।

## भारत में आर्थिक राष्ट्रवाद के प्रसार–तत्व एवं प्रत्यस्त–तत्व

महात्मा गाँधी ने वस्तुतः स्वराज की कल्पना करके भारत में आर्थिक राष्ट्रवाद को पुर्नजीवन दिया। चरखे की अर्थव्यवस्था, स्वदेशी की भावना, पूँजी

के स्थान पर श्रम का महत्व, कुटीर एवं लघु उद्योगों के विकास के परिपोषण और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास पर ध्यान–केन्द्रण के माध्यम से महात्मा गाँधी ने भारत में आर्थिक राष्ट्रवाद का पुर्नजागरण किया। लेकिन कालान्तर में मशीनीकरण, यंत्रीकरण, नगरीयकरण, वृहत औद्योगीकरण, पश्चिमी राष्ट्रों के संवृद्धि मॉडल, आर्थिक विकास एवं आर्थिक संवृद्धि के प्रत्ययों पर आधारित आर्थिक विकास की प्रक्रिया ने भारत में गरीबी, बेरोजगारी, कुपोषण, असमानता, विपन्नता एवं उलारवादी (द्वैत) अर्थव्यवस्था को परिपोषित किया है। भारत में आर्थिक राष्ट्रवाद के प्रसार तत्व तो गाँधी मॉडल पर ही विशेषतः आधारित थे। लेकिन बाद में नेहरू मॉडल पर आधारित मिश्रित अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत गहन पूँजी विनियोजन पर केन्द्रित आधारभूत औद्योगीकरण की प्रक्रिया ने कुटीर एवं लघु उद्योगों के अप्रयोज्य बनाते हुए आज भारतीय अर्थव्यवस्था को उस स्थल पर लाकर खड़ा कर दिया है जहाँ राष्ट्रवाद बनाम मुद्रा एवं पूँजी संक्रेन्दित न्यस्तवाद का विरोधाभासी प्रक्रम उत्पन्न हो गया है। आज आर्थिक निर्णय की प्रक्रिया कल्याणवादी न होकर मौद्रिकवाद, न्यस्त स्वार्थ प्रेरित, लकवाग्रस्त और अधोगामी हो गयी है। फलतः राष्ट्रवाद एवं आर्थिक राष्ट्रवाद को खंडित करने वाले नकारात्मक तत्व यथा जातिवाद, सम्प्रदायवाद, क्षेत्रवाद, राज्यवाद, आतंकवाद, नक्सलवाद, वंशवाद, आरक्षणवाद, मनी लांड्रिग और मैच फिक्सिंग इस अर्थव्यवस्था पर हावी हो गये है। वस्तुतः ये सबके सब आज के भारत राष्ट्र, अखण्ड भारत की वे असंतुलनकारी शक्तियाँ हैं जो कि इसे स्थायी एवं सतत संवृद्धि की प्रक्रिया की दिशा में जाने से रोक रही हैं। इसलिए हमारे सूक्ष्म वित्त, मनरेगा और समावेशी विकास जैसे धरातलीय मॉडल भी असफल सिद्ध हो रहे हैं।

## भारत में राष्ट्रवाद के परिप्रेक्ष्य में नव्य आर्थिक व्यूह रचना के प्रासंगिक तत्व

भारत एक ऐसा राष्ट्र है जहाँ राष्ट्रवाद असफल तो दिखलाई देता है लेकिन बाह्य आक्रमण और राष्ट्रीय संकट की स्थिति में भारत सदैव एक और अखंड रहा है। अतः अनेकों परस्पर विरोधी और विलम्बना–तत्वों की क्रियाशीलता के बावजूद भारत में राष्ट्रवाद और आर्थिक राष्ट्रवाद अपने पूर्ण अस्तित्व में हैं। इसे बनाये रखने के लिए हमें अपनी आर्थिक नीतियों में धरातलीय परिवर्तन करने होंगे, स्थायी परिवर्तन करने होंगे तथा विपन्न एवं गरीब वर्ग को राष्ट्रवाद और आर्थिक राष्ट्रवाद की मुख्य धारा में लाना होगा, उनकी सक्रिय सहभागिता उत्पन्न करनी होगी। इसलिए एक बार पुनः गाँधी मॉडल के प्रासंगिक तत्वों जैसे 'ग्राम्य आर्थिक स्वराज' आर्थिक आत्मनिर्भरता की अवधारणा, न्यासीशिप, महिला शक्ति को महत्व और आवश्यकताओं की संयमित पूर्ति के सिद्धान्त को अपनाना होगा। नगरों के आकर्षण से युवाओं को मोड़ते हुए उन्हें 'पुरा' मॉडल अपनाने के लिए प्रेरित करना होगा। रोजगार एवं जीविकोपार्जन के साधन सभी वर्गों को समान रूप से मुहैया हो, अवसरों की लोकतांत्रिक समानता उत्पन्न हो, राष्ट्रीय उत्पादक कार्य संस्कृति का व्यापक जनाधार विकसित हो, यह सुव्यवस्था करनी होगी। यह दर्शन प्रचारित किया जाना चाहिए कि हम यह सोचें और इस आधार पर इस अर्थव्यवस्था (आर्थिक राष्ट्रवाद) के लिए कार्य करें कि हम अपने राष्ट्र को क्या दे रहे हैं, बजाय पाने के तो बहुत कुछ राष्ट्रीय संचेतना उत्पन्न हो सकती है। यह कार्य राजनैतिक नेतृत्व नहीं कर सकता बल्कि सामाजिक संस्थाएं, शैक्षणिक संस्थाएं, समाज और व्यक्ति कर सकते हैं। लेकिन जब तक जमीनी वास्तविकताओं पर आधारित, संवृद्धि और विकास के लाभों के छनन सिद्धान्त को विकसित नहीं किया जाता, जब तक आर्थिक संकेन्द्रण और मौद्रिकवाद पर प्रभावी लोकतांत्रिक नियंत्रण स्थापित नहीं होता, और आर्थिक राष्ट्रवाद के, राष्ट्रीय हितों के संरक्षण की शक्तियाँ सबल नहीं बनती तक तक यह सब

दिवा–स्वप्न रहेगा। तात्पर्य यह है कि हम पश्चिम विकसित राष्ट्रों के आर्थिक सिद्धान्तों को यथा रूप में स्वीकार न करके अपने क्षेत्र की वास्तविकताओं के आधार पर उनका परिष्करण, पुर्नसंयोजन और परिवर्धन करें, पराम्परागत शक्ति कुलक सम्बन्धों को सामान्य समाज के पक्ष में बदलें तभी आर्थिक राष्ट्रवाद सम्पोषित हो सकता है और जिसे भारत की एकता और अखण्डता के लिए प्रभावी होना ही है। यह हमारी सबसे बड़ी राष्ट्रीय आवश्यकता है।

## अन्तिम स्पर्श

राष्ट्रवाद वस्तुतः राष्ट्रप्रेम है। राष्ट्रप्रेम अपनी जन्मभूमि से अपनत्व है, लगाव है, और आत्मिक सम्बद्धता है। आर्थिक राष्ट्रवाद इसका एक विशिष्ट अंग है। व्यक्तिवाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद, राज्यवाद, आतंकवाद, सम्प्रदायवाद, मनीलांड्रिंग, मैच फिक्सिंग जैसे नकारात्मक तत्वों ने राष्ट्रवाद और आर्थिक राष्ट्रवाद दोनों को ही विरूपित किया है। जहाँ राष्ट्रवाद की भावना को बलवती बनाये जाने के लिए राष्ट्रीय संचेतना के चहुंमुखी विकास की आवश्यकता है वहीं दूसरी ओर आर्थिक राष्ट्रवाद को सम्पोषित करने के लिए आयातित आर्थिक सिद्धान्तों, मॉडल्स और अर्थनीतियों के बजाय हमें वास्तविकता और आवश्यकता पर आधारित अपने आर्थिक सिद्धान्त, मॉडल और आर्थिक नीतियों के निर्माण की महती आवश्यकता है। यह ध्यातव्य है कि राष्ट्रवाद वैश्विक व्यवस्था के संदर्भ में एक सहयोगी और सकारात्मक तत्व है, न कि नकारात्मक एवं एकांगी तत्व। इसलिये आज के भारत की ओर कल के भारत के लिए यह और भी आवश्यक है कि हम ऐसा राष्ट्रवादी मॉडल विकसित करें जिसमें कि अधिकारों एवं कर्तव्यों का अनोखा संतुलन विद्यमान हो।

## संदर्भ


1. एम0सी0 वैश्य : आर्थिक विचारों का इतिहास, रतन प्रकाशन मंदिर, आगरा, 1970
2. ए0पी0 थ्रिलवाल : ग्रोथ एण्ड डेवलेपमेण्ट, इ0एल0बी0एस0 एण्ड मैकमिलन, दिल्ली, 1978
3. गुन्नार मिर्डल : इकानॉमिक थ्योरी एण्ड अण्डर डेवलप्ड रीजन्स, वोरा एवं क0, बाम्बे, 1958
4. एस0एन0 लाल एवं एस0के0 लाल : भारतीय अर्थव्यवस्था–सर्वेक्षण तथा विश्लेषण, शिवम् पब्लिशर्स, इलाहाबाद, 2013
5. गेराल्ड एम0 मॉयर : इण्टरनेशनल ट्रेड एण्ड डेवलपमेन्ट हारपर एण्ड रो, न्यूयार्क, 1965
6. इंडियन इकानॉमिक एसोसिएशन, पॉपुलर प्रकाशन, बाम्बे : दॅ ड्रेन थ्योरी, 1968


Copyright © 2016 *Dr. Sharad Dixit*. This is an open access refereed article distributed under the Creative Common Attribution License which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.